सभापर्व कथासार

सभापर्व में दस (१०) उपपर्व, ४०८७ श्लोक हैं। उनके आधार पर सभापर्व का कथासार दिया जा रहा है।

१) सभाक्रियापर्व

इसमें (१-४) चार अध्याय तथा १४६ श्लोक हैं। अर्जुन ने खाण्डवदाह से मयासुर की रक्षा की। इसके बदले कुछ न कुछ कार्य करने के लिए उस ने अर्जुन से प्रार्थना की। उसका सङ्कल्प पूरा होने के लिए श्रीकृष्ण का कोई काम करने के लिए उस ने मयासुर को सलाह दी। उस की प्रेरणा से श्रीकृष्ण ने उसे युधिष्ठिर के लिए एक सभाभवन बनाने को कहा। उस ने पाण्डवों तथा श्रीकृष्ण की रुचि के अनुसार सभाभवन बनाने का निश्चय किया। श्रीकृष्ण खाण्डवप्रस्थ में पाण्डवों के साथ सुखपूर्वक रहने लगे। कुछ दिनों के बाद उस ने पिताजी के दर्शन के लिए वहाँ से द्वारका जाने का विचार किया। युधिष्ठिर तथा कुन्ती की आज्ञा लेकर श्रीकृष्ण वीर सात्यकि तथा सारथि दारुक के साथ द्वारका प्रस्थान किया।

मयासुर ने पूर्वोत्तरदिशा में कैलास से उत्तर मैनाक पर्वत के पास जाकर गदा, शङ्ख और सभा बनाने के लिए स्फटिक मणिमय द्रव्य आया। श्रेष्ठ गदा भीमसेन को और देवदत्त नामक उत्तम शङ्ख अर्जुन को भेंट के रूप में दिया और उत्तम द्रव्यों से सभा का निर्माण करके धर्मराज को समर्पित किया। पूजा पाठ के पश्चात् कुन्तीपुत्र उस भवन में प्रविष्ट हुई।

२) लोकपालसभाख्यानपर्व

इसमें (५-१२) आठ अध्याय तथा ३९२ श्लोक हैं। एक दिन पाण्डव, महापुरुष तथा गन्धर्वों के साथ सभा में विराजमान थे। उस समय ब्रह्मर्षि नारद ने पाण्डवों से प्रेमपूर्वक मिलने वहाँ आये। युधिष्ठिर ने भाइयों सहित यथोचित पूजा करके उन्हें सन्तुष्ट किया। नारद महर्षि बहुत प्रसन्न हुए और धर्मराज से धर्म, काम और अर्थसंयुक्त बातें पूछी। उस ने धर्मराज से पूछा कि ‘क्या तुम काल का विभाग करके नियत और उचित समय पर धर्म अर्थ कामों का सेवन करते हो या नहीं? व्याख्यानशक्ति, प्रगल्भता, तर्ककुशलता, भूतकाल की स्मृति, भविष्य पर दृष्टि तथा नीतिनिपुणता नामक राजोचित छः गुणों के द्वारा मन्त्र, औषध, इन्द्रजाल, साम, दान, दण्ड और भेद नामक सात उपायों की, अपने और शत्रु के बलाबल की तथा देश, दुर्ग, रथ, हाथी आदि के रक्षक चौदह व्यक्तियों की भलीभाँति ध्यान रखते हो? क्या तुम हजारों मूर्खों के बदले एक पण्डित को हि आदरपूर्वक स्वीकार करते हो? राजन्! भोजन और वेतन में विलम्ब होने पर भृत्यगण अपने स्वामी पर कुपित हो जाते हैं और उनका वह कोप महान् अनर्थ का कारण बताया गया है। भरतकुलश्रेष्ठ! जो लोग तुम्हारे हित के लिए भारी सङ्कट या मृत्यु को प्राप्त करते हैं उनके कुटुम्बीकों की रक्षा करते हो? तुम्हारी आमदनी और खर्च को लिखनेवाले गणकलेखक प्रतिदिन पूर्वाह्नकाल में तुम्हारे सामने अपना हिसाब पेश करते हैं या नहीं? क्या तुम्हारे राज्य के किसान सन्तुष्ट

हैं? क्या तुम रात्रि के प्रथम द्वितीय याम में सोकर अन्तिम याम में उठकर धर्म एवं अर्थ का चिन्तन करते हो? नारदमहर्षि के वचन सुनकर राजा युधिष्ठिर ने उन्हें अभिवादन कर कहा कि 'आपने जैसा उपदेश किया वैसा ही करूँगा। आपकी शिक्षा से मेरी प्रज्ञा और भी बढ गयी है'। ऐसा कहकर उस ने वैसा ही आचरण किया और
समुद्रपर्यन्त पृथ्वी राज्य पा लिया। इस प्रकार इस अध्याय में राजधर्मों का सभी प्रकार से स्पष्ट किया।

नारद के उपदेश पूरे होने के बाद युधिष्ठिर ने उनकी प्रशंसा की और पूछा कि 'ब्रह्मर्षि! क्या आपने पहले ऐसी या इससे भी अच्छी सभा देखी है?' उसका यह प्रश्न सुनकर नारद मधुरवाणी में बोला कि 'ऐसी सभा मैं ने मनुष्यलोक में न तो पहले कभी देखी है और न कानों से सुनी है। फिर धर्मराज सभी दिव्य सभाओं का वर्णन सुनाने के लिए नारद महर्षि से पूछने पर उस ने इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर तथा ब्रह्मा की सभा का वर्णन किया और कहा कि नृपश्रेष्ठ ये सभी सभाएँ मैं ने पूर्वकाल ने देवलोक में देखी हैं। मनुष्यलोक में तो तुम्हारी यह सभा ही सर्वश्रेष्ठ है।

फिर युधिष्ठिर ने नारदमहर्षि से पूछा कि 'महर्षे! आपने इन्द्र की सभा के राजर्षियों में केवल हरिश्चन्द्र का ही उल्लेख किया है। हरिश्चन्द्र की महत्ता क्या है जिस से वे इन्द्र से स्पर्धा करते हैं। हे मुने! आप ने पितृलोक में जाकर मेरे पिता पाण्डु को देखा था, उन्होंने आपसे कैसे मिले थे? आप से क्या कहा? सब कुछ सुनने के लिए मेरा मन उत्कण्ठित हो रहा है। युधिष्ठिर के इस तरह पूछने पर नारद ने हरिश्चन्द्र के गुणगणों का वर्णन करते हुए कहा कि हे नरेश्वर! हरिश्चन्द्र से किए गये दानधर्मों से तृप्त ब्राह्मण आशीर्वाद से वे अन्य राजाओं की अपेक्षा अधिक तेजस्वी और यशस्वी बने। इसीलिये वे इन्द्रसभा में सम्मानपूर्वक विराजमान होते हैं। जो राजा राजसूय नामक यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं वे इन्द्र के साथ रहकर आनन्द भोगते हैं। हे राजन्! हरिश्चन्द्र की सम्पत्ति देखकर अत्यन्त चकित तुम्हारे पिता पाण्डु ने मुझे भूलोक को आता जानकर तुम से कहने के लिए यह संदेश दिया है कि 'हे भारत! सारी पृथ्वी को जीतने में समर्थ तुम राजसूय नामक यज्ञ का अनुष्ठान करो। उस के अनुष्ठान से मैं भी हरिश्चन्द्र की भाँति बहुत वर्षों तक इन्द्रभवन में आनन्द भोगूँगा। महर्षि नारद पिता के संकल्प को पूरा करने का उपदेश देकर युधिष्ठिर से अनुमति लेकर ऋषियों के साथ द्वारका चले गये। उनके जाने के बाद युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ राजसूय नामक यज्ञ के विषय में विचार करने लगे।

३)राजसूयारम्भपर्व

इस पर्व में सात अध्याय तथा २७५ श्लोक हैं। अपने पिता पाण्डु की इच्छा की पूर्ति के लिए राजा युधिष्ठिर ने राजसूय नामक यज्ञ करने का सङ्कल्प किया और उस के अनुष्ठान में ही मन लगाया। इस के साथ साथ उस ने समस्त लोकों का हित, और धर्म का भी चिन्तन किया। प्रजाहितकार्यों से वे अजातशत्रु

बन गये। उस के पूछने पर सब मन्त्रियों ने राजसूययज्ञ के अनुष्ठान में अपनी सम्मति प्रकट की। फिर युधिष्ठिर अप ने भाइयों, ऋत्विजों, मन्त्रियों तथा धौम्य एवं व्यास आदि महर्षियों के साथ इस विषय पर पुनः विचार करने लगे। सब लोग युधिष्ठिर को राजसूययज्ञ करने का योग्य बताया। फिर उस ने श्रीकृष्ण से सलाह लेना चाहा। दूत इन्द्रसेन के द्वारा राजा युधिष्ठिर को अपना दर्शन चाहनेवाला जानकर स्वयं श्रीकृष्ण दूत के साथ इन्द्रप्रस्थ चल पडे।

धर्मराज ने श्रीकृष्ण से राजसूय के बारे में अन्तिम निर्णय पूछा। श्रीकृष्ण ने धर्मराज से

कहा कि हे राजन्! सकलसद्गुणभूषित आप राजसूययज्ञ करने के लिए योग्य हैं। आप सब कुछ जानते हैं। फिर भी मैं आप से कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। हे भारत! जो नियम है कि राजा समस्त क्षत्रियों को जीत लेगा वही सम्राट होगा। अभी अभी महीपति जरासन्ध ने समस्त क्षत्रियों की राज्यलक्ष्मी का तिरस्कार कर सम्राट के पद पर अभिषिक्त हुए हैं। अब सारा जगत् उसी के वश में है। राजा शिशुपाल उसका आश्रय लेकर उसका सेनापति बन गया। बल में देवताओं के समान हंस और डिम्भक उस की शरण ले चुके हैं। जरासन्ध,हंस और डिम्भक ये तीनों मिलकर तीनों लोकों का सामना करने में पर्याप्त हैं। हंस नामक एक राजा युद्ध में बलराम से मारा गया। डिम्भक अपने भाई को मरा हुआ समझकर यमुना में कूदकर मर गया। हंस भी भाई के शोक से यमुना में कूद पडा और उसी में डूबकर मर गया। दोनों की मृत्यु सुनकर जरासंध हताश हो गया और अपनी राजधानी लौट गया। राजन्! जब तक जरासंध जीवित है तब तक आप राजसूययज्ञ पूर्ण नहीं कर सकते। उस ने बडे बडे राजाओं को कैद कर लिया है। आप यज्ञ को पूर्ण करना चाहते हैं तो कैदी राजाओं को छुडाकर जरासंध को मारने का प्रयत्न कीजिए।

श्रीकृष्ण की बात सुनकर युधिष्ठिर ने उन से कहा कि सभी कार्यों में आप ही प्रमाण हैं। चतुर भीमसेन ने युधिष्ठिर के वचन सुनकर कहा कि राजनीति से दुर्बल भी बलवान् शत्रु को जीत सकता है। श्रीकृष्ण में नीति है, मुझ में बल है और अर्जुन में विजय की शक्ति है। तीनों मिलकर जरासंध का वध का कार्य पूरा कर लेंगे। श्रीकृष्ण ने भीम की बात मान ली और कहा कि हम जरासंध को युद्ध में मारेंगे। लेकिन युधिष्ठिर ने निरुत्साह प्रकट करते हुए कहा कि राजसूय का अनुष्ठान बहुत कठिन है। इसलिये इस कार्य को छोड देना ही मुझे अच्छा लगता है। इस तरह युधिष्ठिर के उत्साहहीन होने पर उत्साहपूर्ण अर्जुन ने कहा कि यदि ऐसा हो तो शान्तिकामुक सन्यासियों का काषाय वस्त्र ही हमें प्राप्त होगा। लेकिन हम दुर्बल नहीं हैं। शत्रुओं से अवश्य युद्ध करेंगे।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन के वचनों का समर्थन करते हुए कहा कि नीतिशास्त्र के अनुसार शत्रुओं पर आक्रमण करना ही वीर पुरुषों का कर्तव्य है। युधिष्ठिर के पूछने पर श्रीकृष्ण ने जरासंध की उत्पत्ति को सुनाया। मगधदेश में बृहद्रथ नामक राजा थे। काशीराज की दो कन्याओं के साथ उसका विवाह हुआ। संतानहीन हेने

से वह दुःखी था। एक दिन उस ने सुना कि चण्डकौशिक नामक महर्षि वहाँ पधारे हैं। समाचार पाकर राजा ने पत्नियों के साथ उनका दर्शन करके तथा अपनी मन की व्यथा का निवेदन किया। उस समय उस के गोद में गिरे आम्र फल को अभिमन्त्रित करके पुत्र प्राप्ति के लिए महर्षि ने उसे वर दे दिया। कालान्तर में प्रसवकाल पूर्ण होने पर उन रानियों के एक एक गर्भ से एक एक टुकडा उत्पन्न हुआ। प्रत्येक टुकडे में अर्धभाग इन्द्रिय थे। भयभीत होकर दोनों रानियों ने उन दो टुकडों को बाहर फेंक दिये। जरा नामक राक्षसी ने अनायास ले जाने के लिए उन दो टुकडों को जोड दिया। उनके परस्पर संयोग होते ही शरीरधारी वीरकुमार बन गया। राक्षसी मानवीयरूप धारण करके उस पुत्र को बृहद्रथ को सौंप दिया। जरा राक्षसी अपना परिचय दिया और कहा कि दो टुकडों को जोडने में मैं निमित्तमात्र हूँ। इस बालक के लिए आवश्यक संस्कार करो। यह इस संसार में मेरे
ही नाम से विख्यात होगा। ऐसा कहकर राक्षसी अन्तर्धान हो गयी। कालान्तर में जरासंध का राज्याभिषेक करके महाराज बृहद्रथ अपनी दोनों पत्नियों के साथ तपोवन चले गये। श्रीकृष्ण के द्वारा अपने जामाता कंस के मारे जाने पर उस के साथ जरासंध का वैर हो गया।

४)जरसन्धवधपर्व

इसमें पाँच अध्याय तथा २८३ श्लोक हैं। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा कि हे धर्मराज! हंस, डिम्भक और कंस के मरने से अब जरासंध निस्सहाय है। उसे नाश करने का यही उचित अवसर है। बाहुयुद्ध के द्वारा उसे जीतना चाहिए। भीम और अर्जुन के साथ हम तीनों मिलकर एकान्त में जरासंध से मिलेंगे। वह अवश्य भीम के साथ ही द्वन्द्वयुद्ध करने को उद्यत होगा। भीमसेन अकेला ही उसे नाश करने में समर्थ है। मुझ पर विश्वास हो तो भीम और अर्जुन को मेरे साथ भेजिए। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की बात मान ली और कहा कि हे गोविन्द! आप ही हम सब के रक्षक हैं। अर्जुन और भीम के साथ आप हैं तो अवश्य ही कार्य की सिद्धि होगी।

युधिष्ठिर के वचन से संतुष्ट होकर श्रीकृष्ण भीम और अर्जुन तीनों मगधराज्य की ओर निकले। उन को जाते देखकर युधिष्ठिर ने निश्चय किया जरासंध अवश्य मारा जायगा। इन तीनों स्नातक व्रत का पालन करनेवाले ब्राह्मणों के वेष धारण करके जरासंध के नगर में प्रविष्ट हुए। उन्हें देखकर मगधवासियों का बडा आश्चर्य हुआ। बडे अहंकार के साथ वे तीनों जरासंध के निकट गये। उस ने उनका आतिथ्यपूर्वक सत्कार किया। राजसभा में स्नातकव्रतवेषधारी इन तीनों के विपरीत आचरण की निन्दा करते हुए जरासन्ध ने उनके पर्वतशिखर तोडना, छद्मवेष से अद्वार प्रवेश करना आदि के बारे में पूछा। तब श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि स्नातक व्रत का पालन करनेवाले ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णों के लोग होते हैं। क्षत्रियों का बल उनकी भुजाओं में होता है। देखना चाहते तो निश्चय ही देख लो। शत्रु के घर के अद्वार से ही प्रवेश करते हैं। हम

कार्यार्थी यहाँ आये हैं। शत्रु से पूजा हम नहीं ग्रहण कर सकते।

श्रीकृष्ण की बात सुनकर जरासंध ने आश्चर्य से पूछा कि आप लोगों से मुझे क्या वैर है? प्रमाद से आप लोग मुझे अपराधी बता रहे हैं। उसका वचन सुनकर श्रीकृष्ण ने कहा कि हे महाबहो! सम्पूर्ण कुल का एक ही महापुरुष संरक्षा करता है। उस की आज्ञा से धर्म का पालन करनेवाले हम लोग तुम्हें दण्ड देने को उद्यत हुए हैं। हम ब्राह्मण नहीं हैं। ये दोनों पाण्डुपुत्र भीम और अर्जुन, मैं तो तुम्हारा शत्रु श्रीकृष्ण हूँ। ऐसा कहकर उस ने जरासंध को युद्ध के लिए ललकारा। जरासंध भी देवता को बलि देने के लिए लाये गये राजाओं को छोडने से इनकार किया और अकेले ही उनके साथ युद्ध करने का निश्चय किया। श्रीकृष्ण के पूछने पर जरासंध ने भीमसेन के साथ युद्ध करने का निर्णय प्रकट किया। श्रीकृष्ण की आज्ञा पाकर भीमसेन भी सोत्साह युद्ध करने जरासंध के पास आया। वे दोनों योद्धाओं द्वन्द्व युद्ध में मेघ के समान गम्भीर नाद करने लगे। श्रीकृष्ण ने जरासंध के वध के लिए भीमसेन को उत्तेजित किया। उस के बाद भीमसेन ने अपने एक हाथ से उसका एक पैर पकडकर उसे दो खण्डों में विभक्त कर डाला। उस के मृतशरीर को राजभवन के द्वार पर छोडकर वे तीनों वहाँ से चले गये। कैद में पडे हुए राजाओं को छुडाया। जरासंध के सोदर्यवान् नामक रथ में भीम और अर्जुन को
बिठाकर श्रीकृष्ण स्वयं सारथी बनकर गिरिव्रज नगर से बाहर निकले। जरासंध का पुत्र सहदेव पुरोहित को आगे करके सेवकों और मन्त्रियों के साथ नगर से बाहर निकला और श्रीकृष्ण से मिलकर उनकी शरण में आया। उनकी आज्ञा पाकर अपने पिता का अन्त्येष्टि संस्कार किया।

भीम और अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ सकुशल स्वीय नगर लौट आये। युधिष्ठिर बहुत खुश हुए और राजसूय यज्ञ को आरंभ करने का निश्चय किया। श्रीकृष्ण युधिष्ठिर आदि से आज्ञा पाकर द्वारका चले गये।

५) दिग्विजयपर्व

इस पर्व में आठ अध्याय तथा ३८९ श्लोक हैं। अर्जुन ने अपने कोश को बढाने के लिए समस्त राजाओं को जीतकर उनसे कर वसूल करना चाहा। इसलिये कुबेर द्वारा पालित उत्तर दिशा को जीतने के लिए प्रस्थान करने को भाई युधिष्ठिर से अनुमति माँगी। अर्जुन के इस संकल्प पर व्यासमहर्षि ने साधुवाद दिया और कहा कि अर्जुन! तुम उत्तरदिशा की यात्रा करो, भीमसेन पूर्वदिशा की यात्रा करें। महारथी सहदेव दक्षिणदिशा की ओर प्रस्थान करें। नकुल वरुणपालित पश्चिम दिशा पर आक्रमण करें। तुम लोग इसका पालन करो। पाण्डवों ने बडे हर्ष के साथ उन की आज्ञा का पालन किया। युधिष्ठिर भी पाण्डवो की दिग्विजय यात्रा की सम्मति दे दी। पाण्डव दिग्विजय के लिए प्रस्थान हुए। युधिष्ठिर तो खाण्डवप्रस्थ में रह गये।

जनमेजय के पूछने पर वैशम्पायन पाण्डवों की दिग्विजय यात्रा का वर्णन किया। कुन्ती के चार पुत्रों ने एक ही समय में चारों दिशाओं की पृथ्वी पर विजय

प्राप्त करके अमूल्य सम्पत्ति के साथ इन्द्रप्रस्थ लौट आये और सारा धन धर्मराज को सौपं दिये।

६) राजसूयपर्व

इसमें तीन अध्याय तथा १०३ श्लोक हैं। राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ धर्मपूर्वक भूमण्डल का शासन करने लगे। उनके शासनकाल में उपद्रवों का नाम ही नहीं था। पर्याप्त संपत्ति होने से उस ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। उस समय श्रीकृष्ण नाना प्रकार के धन रत्नों की भेटं ले विशाल सेना के साथ वहाँ पहुँचे। युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के साथ यज्ञ करने के लिए श्रीकृष्ण से आज्ञा माँगी। भगवान् श्रीकृष्ण ने राजसूय यज्ञ के गुणों का विस्तारपूर्वक वर्णन कर युधिष्ठिर से कहा कि आप सम्राट होने योग्य हैं। इसलिये दीक्षा ग्रहण करके हमें कृतकृत्य कीजिए। श्रीकृष्ण की अनुमति पाकर युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के साथ यज्ञसंभार जुटाना आरम्भ किया! सारी व्यवस्था को देखने का काम योद्धाओं में श्रेष्ठ सहदेव तथा मन्त्रियों को सौपं दी। तदनन्तर द्वैपायन व्यासमहर्षि भी बहुत से ऋत्विजों को ले आये। वे साक्षात् मूर्तिमान् वेद थे। उस यज्ञ में स्वयं व्यास ने ब्रह्मा का काम संभाला। याज्ञवल्क्य अध्वर्यु थे। युधिष्ठिर के आदेश से मन्त्री सहदेव ने सभी राज्यों से ब्राह्मण आदि चार वर्णों के लोगों को आमन्त्रित करने के लिए दूतों को भेजा। वहाँ आये सब ब्राह्मणों ने शुभ काल में युधिष्ठिर को राजसूययज्ञ की दीक्षा दी। उन सब के ठहरने के लिए धर्मराज की आज्ञा से पृथक् पृथक् घर बनाये थे। स्वर्ग में इन्द्र की भांति भूमण्डल में युधिष्ठिर का यज्ञ प्रारम्भ हुआ। तदनन्तर राजा युधिष्ठिर ने भीष्म, द्रोणाचार्य, धृतराष्ट्र, विदुर, कृपाचार्य, तथा दुर्योधन आदि भाइयों को बुलाने के लिए पाण्डुपुत्र नकुल को हस्तिनापुर भेजा।

पाण्डुकुमार नकुल ने हस्तिनापुर जाकर ससंतोष सब का निमन्त्रण किया भीष्म, धृतराष्ट्र, दुर्योधन आदि उस यज्ञ में पधारे थे। उस समय वह यज्ञमण्डप देवताओं से भरे स्वर्गलोक के समान शोभा पा रहा था। यज्ञदीक्षित धर्मराज ने सब का स्वागत करके उनको यथायोग्य अधिकारों में लगाया। स्वयं श्रीकृष्ण भी ब्राह्मणों के चरण क्षालन में लगे थे। भक्ष्य भोज्य सामग्री का देखभाल दुःशासन को, ब्राह्मणों का स्वागत सत्कार भार अश्वत्थामा को, राजाओं की देखभाल काम संजय को, कृत तथा अकृत विषयों की देखरेख का काम भीष्म और द्रोणाचार्य को सौंपा गया। यज्ञ में सब लोग प्रसन्न हुए और सब को तृप्ति मिली।

७) अर्घाभिहरणपर्व

इसमें चार अध्याय तथा ९२० श्लोक हैं। राजसूययज्ञ के अङ्गभूत अभिषेचनीय कर्म के दिन सत्कार के योग्य महर्षिगण और ब्राह्मणलोग राजाओं के साथ यज्ञभवन में गये। युधिष्ठिर की सम्पत्ति तथा यज्ञविधि को देखकर नारद को बडी प्रसन्नता हुई। मन ही मन श्रीहरि का चिन्तन किया और सोचने लगा कि भगवान नारायण ही शत्रुविनाश के लिए यदुकुल में अवतार ग्रहण किया है। उन्होंने समस्त देवताओं को आदेश दिया था कि तुम लोग भूलोक में पैदा होकर

अभीष्ट सिद्धि के बाद आपस में एक दूसरे को मारकर फिर देवलोक में आ जाओगे। इस प्रकार आदेश देने के बाद नारायण यदुकुल में स्वयं अवतार लिया। भीष्म ने युधिष्ठिर से यज्ञ में पधारे सब को अर्ध्य देकर सत्कार करने को कहा। धर्मराज के पूछने पर भीष्म ने श्रीकृष्ण को अग्रपूजा के योग्य बताया। उस की आज्ञा के अनुसार पराक्रमी सहदेव ने श्रीकृष्ण को विधिपूर्वक अर्ध्य निवेदन किया। लेकिन श्रीकृष्ण की वह पूजा राजा शिशुपाल नहीं सह सका। भीष्म और धर्मराज की निन्दा करते हुए उस ने श्रीकृष्ण का आक्षेप करने लगा। श्रीकृष्ण को अग्रपूजा का अयोग्य बताकर बहुधा उस की निन्दा करके शिशुपाल आसन से उठकर कुछ राजाओं के साथ सभाभवन से बाहर जाने को उद्यत हो गया।

तब राजा युधिष्ठिर शिशुपाल के समीप दौड आये और उस के व्यवहार को अधर्म बताकर उससे अनुरोध किया। भीष्म ने धर्मराज से कहा कि श्रीकृष्ण ही सब से परम पूजनीय हैं। जो कोई इसका स्वीकार नहीं करता तो उस की अनुनय करने का अवसर नहीं है। श्रीकृष्ण हमारे लिए ही नहीं वे तीन लोकों के पूजनीय हैं। सम्पूर्ण जगत् भगवान् श्रीकृष्ण में ही पूर्णरूप से प्रतिष्ठित है। हे शिशुपाल! श्रीकृष्ण के साथ ऐसा व्यवहार करना सर्वथा अनुचित है। जो ज्ञान में बडा हो वही ब्राह्मणों में पूजनीय होता है। क्षत्रियों में वही पूजनीय समझा जाता है जो बल में सब से अधिक हो। धनधान्यसम्पत्तिवाला वैश्यों में सर्वमान्य है। जो उम्र से बडा हो वही शूद्रों में पूजनीय माना जाता है श्रीकृष्ण तो वेदवेदाङ्गों के ज्ञानी तथा सब से बलवान हेने के नाते उनके सिवा और कोई अधिक पूजनीय नहीं होता। भीष्म का वचन सुनकर धर्मराज ने श्रीकृष्ण के अवतारों और चरित्रों का क्रमशः वर्णन करने की प्रार्थना की।

भीष्म ने भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का संग्रहरूप में वर्णन किया। पूर्वकाल में श्रीकृष्ण ही नारायण रूप में स्थित थे। ये ही स्वयंभू एवं संपूर्णजगत के प्रपितामह हैं। उन्होंने पहले जल की सृष्टि की। फिर उसमें ब्रह्माजी को उत्पन्न किया। चतुर्मुख ब्रह्मा ने समस्त लोकों की सृष्टि की। महाप्रलय में सब परमात्मा में विलीन होते हैं। केवल नारयण ही शेष रहते हैं। पूर्वकाल में
भगवान् नारायण ने मधु और कैटभ नामक राक्षसों को उनकी इच्छा के अनुसार अपनी जंघों पर रखकर मार डाला उन दैत्यों ने जो मेद छोडा उससे सारी वसुधा आच्छादित हो गयी। तभी से यह पृथ्वी मेदिनी नाम से प्रसिद्ध हुई। भीष्म ने वराह, नृसिंह, वामन, दत्तात्रेय, परशुराम, श्रीराम, श्रीकृष्ण तथा कल्कि अवतार विशेषों को संग्रहरूप में सुनाया और कहा कि यदि शिशुपाल इस पूजा को अनुचित मानता है तो इस विषय में जो कुछ करना चाहे वैसा करे। ऐसा कहकर भीष्म चुप हो गये।

माद्रीकुमार सहदेव ने श्रीकृष्ण की पूजा को न माननेवाले को चुनौती दी और उनकी पूजा करके अर्ध्यनिवेदन कार्य पूरा कर दिया। श्रीकृष्ण की पूजा सम्पन्न हो जाने पर शिशुपाल अत्यन्त क्रुद्ध होकर सब राजाओं को युद्ध के लिए उत्साहित किया। सहदेव की बातों को अपमान समझकर कुछ राजाओं ने

युधिष्ठिर के अभिषेक तथा श्रीकृष्ण की पूजा का कार्य सफल न हो वैसा प्रयत्न करने की शपथ लिया। इस पर श्रीकृष्ण ने समझ लिया कि ये नरेश युद्ध के लिए तैयार हैं।

८) शिशुपालवधपर्व

इस उपपर्व में छे अध्याय तथा ३१० श्लोक हैं। युद्ध के लिए सन्नद्ध राजाओं को देखकर क्षुब्ध धर्मराज ने उन्हें शान्त करने का उपाय भीष्म पितामह से पूछा। भीष्म ने कहा कि कुरुवीर! डरो मत। क्या कुत्ता कभी सिंह को मार सकता है? हम ने कल्याणमय मार्ग पहले ही चुन लिया। चेदिराज शिशुपाल अपनी विवेकशक्ति खोकर सब राजाओं को यमलोक में भेज देने की इच्छा से सिहं जैसे आचरण कर रहा है। जब तक श्रीकृष्ण सिंह की तरह जाग नहीं उठते तब तक सुप्त सिंह के समीप कुत्ते जैसे ये लोग शोर मचाते रहते हैं। भीष्म की बात सुनकर शिशुपाल ने कटु वचनों से उस की निन्दा की। कहा कि कुल को कलङ्कित करनेवाले हे भीष्म! बूढे होकर भी अपने इस कृत्य पर तुम्हें लज्जा क्यों नहीं आती।

तृतीय प्रकृति में स्थित तुम्हें धर्मविरुद्ध बातें कहना उचित है। तुम धर्म को बिलकुल नहीं जानते। इस तरह बहु प्रकार से भीष्म पर दोषारोपण करके फिर उस ने वृद्ध हंस वृत्तान्त को सुनाकर कहा कि ये सब नरेश कुपित होकर हंस को जैसे तुम्हें मार डालेंगे। मूर्ख भीष्म! आश्चर्य की बात यह है कि तुम्हारे प्रभाव से पाण्डव भी सन्मार्ग से हटाये गये हैं। इसलिये ये भी कृष्ण के इस कार्य को ठीक समझते हैं।

शिशुपाल की बातों पर बलवान भीमसेन क्रोधाग्नि से जल उठे। वे उछलकर शिशुपाल के पास पहुँचना चाहते थे। इतने में भीष्म उठकर उसे पकड लिया और अनेक प्रकार की बातों से उसे शान्त कर दिया। भीम शिशुपाल की परवाह नहीं की। भीष्म ने शिशुपाल के जन्मवृत्तान्त का वर्णन किया। चेदिराज कुल में शिशुपाल चार भुजाओं तथा तीन आँखों से पैदा हुआ। इसकी विकृत आकृति देखकर माता पिता भय से काँप उठे और उन्होंने उसका त्याग करने का निश्चय किया। उस समय आकाशवाणी सुनायी पडी कि जिसके द्वारा गोद में लिए जाने पर इसकी दो अधिक भुजाएँ भूमि पर गिर जायँगी और जिसे देखकर बालक का ललाटस्थ तीसरा नेत्र ललाट में लीन हो जायगा वही इसकी मृत्यु में निमित्त बनेगा। विचित्र आकृतिवाले बालक के जन्म का समाचार सुनकर भूमण्डल के सभी नरेश उसे देखने आये। चेदिराज ने अपने पुत्र
को हर एक की गोद में रखा। द्वारका में यह समाचार सुनकर बलराम और श्रीकृष्ण दोनों अपने पिता वसुदेव की बहिन (बुआ) श्रुतश्रवा से मिलने चेदिपुर गये। श्रुतश्रवा ने बडे प्रेम से अपने पुत्र को श्रीकृष्ण की गोद में डाल दिया। उसी समय उस बालक के दोनों भुजा गिर गयीं और नेत्र भी ललाट में लीन हो गया। माता श्रुतश्रवा ने भयभीत होकर पुत्र की रक्षा के लिए वर माँगी और कही कि हे कृष्ण! मेरे लिए तुम मेरे पुत्र के अपराधों को क्षमा करना। तब श्रीकृष्ण ने उस के

सौ अपराधों को क्षमा करने का वर दिया।

भीष्म के वचनों से शिशुपाल का क्रोध द्विगुणित हुआ और कहा कि हे भीष्म! किसी का स्तुति करना चाहते तो जनार्दन को छोडकर कर्ण जैसे महारथियों में किसी एक का करो। हे भीष्म! हिमालय के दूसरे भाग में भूलिङ्ग नामक एक चिडिया रहती है वह सर्वदा विपरीत भाव सूचक बातें करती है। वह बोलती है कि साहस मत करो। लेकिन वह भारी साहस का काम करती है। वह मूर्ख चिडिया माँस खाते हुए सिंह के दाँतों में लगे हुए माँस के टुकडे को अपनी चोंच से ग्रहण करती रहती है। उसका विनाश तो अवश्य है। अधार्मिक भीष्म! तुम्हारा व्यवहार भी उस चिडिया जैसी दीख पडता है। शिशुपाल के कटु वचनों को सुनकर भीष्म ने कहा कि इन समस्त नरेशों को मैं तृण जैसा समझता हूँ, उनके वचन सुनकर बहुत से राजा कुपित हो उठे। भीष्म की बात सुनकर चेदिराज शिशुपाल ने श्रीकृष्ण को युद्ध के लिए ललकारा। श्रीकृष्ण ने शिशुपाल के दुष्कर्मों को वहाँ के नरेशों को सुनाया और कहा कि सब के सामने इस ने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया है। मैं इसकी क्षमा न कर सकूँगा। श्रीकृष्ण की बातें सुनकर समस्त राजाओं ने शिशुपाल की निन्दा की। फिर शिशुपाल श्रीकृष्ण की निन्दा करने लगा। तब श्रीकृष्ण ने मन ही मन सुदर्शन चक्र का स्मरण किया। शीघ्र से चक्र हाथ में आ गया। उस ने राजाओं से कहा कि शिशुपाल के सौ अपराधों का क्षमा कर दूँगा। वे सब अपराध अब पूरे हो गये हैं। अब मैं इसका वध करता हूँ। ऐसा कहकर श्रीकृष्ण ने चक्र से चेदिराज शिशुपाल का सिर उडा दिया। उस के शरीर से एक तेजोराशि आविर्भूत हुआ। और श्रीकृष्ण को नमस्कार करके उस के भीतर प्रविष्ट हो गया। युधिष्ठिर ने चेदिदेश के राजसिंहासन पर शिशुपाल के पुत्र को अभिषिक्त कर दिया। अन्त में युधिष्ठिर महर्षियों से बोले कि आप लोगों के प्रभाव से राजसूय महायज्ञ सम्पन्न हुआ और मेरा मनोरथ पूर्ण हो गया। यज्ञ के सफल होने के बाद श्रीकृष्ण द्वारका चले गये। राजा दुर्योधन तथा सुबलपुत्र शकुनि दोनों दिव्यसभा भवन में थे।

९)द्यूतपर्व

इसमें २८ अध्याय तथा ८८८ श्लोक हैं। राजसूययज्ञ के समाप्त हो जाने पर व्यास महर्षि शिष्यों के साथ युधिष्ठिर के पास आये। धर्मराज ने यथोचित उनका पूजन किया और पूछा कि पितामह! नारद महर्षि ने स्वर्ग अन्तरिक्ष और पृथिवी संबन्धि तीन प्रकार के उत्पात बताये हैं। शिशुपाल के मारे जाने से वे उत्पात शान्त हो गये? उस के प्रश्न के समाधान में व्यास महर्षि ने कहा कि उत्पातों का फल तेरह वर्षों तक होता है। इस समय प्रकटित हुआ उत्पात समस्त क्षत्रियों का नाश करनेवाला है। हे धर्मराज! केवल तुम्हीं को निमित्त बनाकर समस्त क्षत्रियगण आपस में लडकर नष्ट हो जायेंगे। इस प्रकार कहकर व्यासमहर्षि अपने शिष्यों के साथ कैलास पर्वत चले गये। उनकी बात सुनकर धर्मराज चिन्ताग्रस्त हो गया और प्रतिज्ञा की कि मैं कभी
किसी से कटु व्यवहार या कटुशब्द का प्रयोग नहीं करूँगा। सब पाण्डव बडे भाई

का अनुसरण करने लगे। माङ्गलिक कृत्य पूरे होने के बाद युधिष्ठिर ने मन्त्रियों के साथ नगर में प्रवेश किया। दुर्योधन तथा शकुनि ये दोनों सभाभवन में रह गये।

दुर्योधन मयनिर्मित सभाभवन की कलाकौशल से आश्चर्यचकित होकर इधर उधर घूमता हुआ स्फटिकमणिमय प्रदेश पर पहुँचकर जल की आशङ्का से उस ने अपना वस्त्र ऊपर उठा लिया। इस प्रकार के भ्रम से उदास हुआ और दूसरी और घूमने लगा। तदनन्तर वह समप्रदेश में ही गिर पडा। पश्चात् स्फटिक मणि के समान स्वच्छ जल से भरी तथा स्फटिकमणिमय कमलों से शोभित वापी (बावली) को स्थल मानकर वस्त्रसहित उसमें गिर पडा। भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा उनके अन्य सेवक उस की भ्रांति पर हँसने लगे। लेकिन दुर्योधन उनका उपहास न सह सका। फिर दुर्योधन ने युधिष्ठिर की आज्ञा लेकर अप्रसन्न मन से हस्तिनापुर चला गया। पाण्डवों के वैभव पर ईर्ष्यालु दुर्योधन के मन में पापपूर्ण चिन्तनों का आविर्भाव हुआ। शकुनि के पूछने पर उस ने अपने दुःख का कारण बताया और अपनी अवस्था धृतराष्ट्र को सूचित करने को कहा। शकुनि ने उससे कहा कि हे दुर्योधन! युधिष्ठिर के प्रति ईर्ष्या करना तुम्हें उचित नहीं है। वे अपना भाग्य का ही उपभोग करते हैं। द्रोणाचार्य आदि की सहायता लेकर तुम भी सारी पृथ्वी पर विजय प्राप्त करो। पाण्डवों को जीतने का उपाय पूछने पर शकुनि ने दुर्योधन को परामर्श करते हुए कहा कि युधिष्ठिर को जुआ खेलने के लिए आमन्त्रित करो। जुआ खेलने में मैं बहुत निपुण हूँ। तीनों लोकों में मेरे जैसे द्यूतविद्यानिपुण कोई नहीं है। धृतराष्ट्र को ये सारी बातें बताने को दुर्योधन ने शकुनि से अनुरोध किया।

शकुनि ने धृतराष्ट्र को दुर्योधन की चिन्ता का समाचार दिया। चिन्ता के कारण पूछने पर दुर्योधन ने अपने पिता धृतराष्ट्र से पाण्डवों की समृद्ध सम्पत्ति तथा उनके वैभव का वर्णन करते हुए कहा कि युधिष्ठिर को शकुनि के साथ द्यूतक्रीडा के लिए आमन्त्रित करें। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा कि बुद्धिशाली मन्त्री विदुर से सोच विचार करके मैं निर्णय लूँगा। पिता के वचन सुनकर दुर्योधन ने कहा कि यदि आप इस कार्य से दूर होंगे तो मैं प्राणत्याग करूँगा। पुत्र प्रेमी धृतराष्ट्र ने दुर्योधन के पक्ष में आ गया और सभाभवन निर्माण करने का आदेश देकर विदुर को बुलाने के लिए दूत को भेजा। द्यूतक्रीडा से दूर रखने के लिए विदुर ने कोशिश की लेकिन असफल रहा। धृतराष्ट्र ने कहा कि मैं दैव को प्रबल मानता हूँ। उस की प्रेरणा से यह द्यूतक्रीडा का आरम्भ होने जा रहा है। यह बात सुनकर अत्यन्त दुःखी विदुर भीष्म जी के पास गये।

विदुर का वचन जानकर राजा धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से द्यूतक्रीडा से विरत होने का उपदेश दिया। लेकिन दुर्योधन सहमत नहीं हुआ। उस ने बताया कि मयनिर्मित सभाभवन में जब मुझे भ्रम हो गया तब भीम, श्रीकृष्ण के साथ अर्जुन, तथा, द्रौपदी ने मेरा परिहास किया। द्वार की आकृति को द्वार समझकर निकलते समय ललाट में चोट लगी। मुझे देखकर नकुल तथा सहदेव हँस पडे। यह मेरे

लिए दुःख की बात थी। फिर दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर को उपहार में मिली वस्तुओं तथा वहाँ उपस्थित राजाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन किया। दुर्योधन की बातें सुनने के बाद धृतराष्ट्र ने उसे समझाने का प्रयास किया। लेकिन दुर्योधन नहीं माना
बल्कि अपने पिता को उत्तेजित करने का प्रयास किया।

शकुनि ने द्यूतक्रीडा का प्रोत्साहन करते हुए द्यूतसभामण्डप के निर्माण करने पर बल दिया। धृतराष्ट्र ने पुत्र की बात मानकर तोरणस्फाटिक नामक सभा तैयार करने हेतु सेवकों को आज्ञा दी। आज्ञा के अनुसार शिल्पी जल्दी ही जल्दी सभा को तैयार कर दिया। सभाभवन के तैयार होने की सूचना पाकर धृतराष्ट्र ने धर्मराज को अपने पास ले आने के लिए विदुर को आज्ञा दी। फिर विदुर ने धृतराष्ट्र को इस काम से रोकने क प्रयास किया। किन्तु असफल रहा। धृतराष्ट्र के बलपूर्वक अवरोध करने पर विदुर पाण्डवों के नगर जाकर युधिष्ठिर से मिला। अतिथि पूजा के बाद उस ने धृतराष्ट्र के सन्देश सुनाते हुए कहा कि धृतराष्ट्र ने धर्मराज की सभा जैसी एक सभा को तैयार करायी हैं। इस सभा में सब भाई मिलजुलकर दुर्योधन आदि के साथ जुआ खेलने की इच्छा करता है। अनिष्टपूर्वक ही धर्मराज ने जुआ खेलने को मान लिया।

सबेरे होने पर युधिष्ठिर ने अपने भाई बन्धुओं, सेवकों तथा द्रौपदी आदि स्त्रियों के साथ हस्तिनापुर की यात्रा की। यात्रा के समय विदुर ने द्यूतक्रीडा के पीछे का रहस्य धृतराष्ट्र को साफ साफ बताया। महाराज युधिष्ठिर हस्तिनापुर जाकर वहाँ धृतराष्ट्र भीष्म, द्रोण आदि से मिले। फिर रात बिताकर प्रातःकाल में नित्यकर्म की समाप्ति के बाद सभाभवन निकले। शकुनि ने उसे द्यूतक्रीडा के लिए बुलाया। युधिष्ठिर जानता है कि शकुनि आदि शठतापूर्वक द्यूतक्रीडा खेलते हैं। तथापि उसे मानना ही पडा। उस के पूछने पर दुर्योधन ने कहा कि शकुनि उस की ओर से खेलेगा और वह स्वयं हर प्रकार के रत्नों को दाँव पर द्यूत आरम्भ हुआ। हर एक दाँव को शकुनि ने जीत लिया। युधिष्ठिर ने अपनी सम्पूर्ण निधियों को हारा। इस प्रकार घोर द्यूतक्रीडा के चलते देखकर विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा कि हे राजन्! दुर्योधन के रूप में आप के घर में एक गीदड निवास कर रहा है। आप इस बात को समझ नहीं पाते। दुर्योधन जुए के नशे में उन्मत्त होकर महोपद्रव का कारण बन रहा है। लोक कल्याण के लिए कुमार्गगामी पुत्र को छोडना अच्छा है। इस प्रकार उपदेश देते हुए उस ने कहा कि आप आज्ञा दें तो अर्जुन उसे बन्दी बना सकता है, जिससे कौरव और पाण्डव सुख पूर्वक रहेंगे। इस प्रकार द्यूतक्रीडा का विरोध करने पर दुर्योधन ने विदुर की निन्दा की। तब विदुर ने कहा कि इस संसार में मन को प्रिय लगनेवाले वचन बोलनेवाला मनुष्य अवश्य मिल सकता है। लेकिन हितकर होते हुए भी अप्रिय वचन को कहने और सुननेवाला दोनों दुर्लभ हैं। हे दुर्योधन तुम जैसे रहना चाहते हो वैसे रहो। तुम्हें नमस्कार है।

जुए में युधिष्ठिर सारी सम्पत्ति हार गये। क्रमशः अपने भ्राताओं तथा स्वयं

अपने को भी दाँव पर लगाकर हार गये। फिर द्रौपदी को दाँव पर लगाया। इस पर द्यूतसभा में उपस्थित बडे बूढे लोगों के मुख से धिक्कार स्वर निकलने लगा। विदुरजी यह दृश्य देखकर अपना सिर थामकर बेहोश से हो गये। सुबलपुत्र शकुनि ने इसे भी जीत लिया। दुर्योधन ने विदुर को आदेश दिया कि द्रौपदी को लाकर उससे सभामण्डप में झाडू लगाने तथा महल की दासियों के साथ रहने को कहें। विदुर ने कहा कि द्रौपदी कभी दासी नहीं हो सकती। क्योंकि राजा युधिष्ठिर पहले अपने को हारकर द्रौपदी को दाँव पर लगाने का अधिकार खो चुका है। दुर्योधन ने विदुर को धिक्कार कहकर प्रातिकामी को आज्ञा दी कि वह द्रौपदी को सभाभवन में ले आये।
उस की आज्ञा के अनुसार प्रतिकामी ने द्रौपदी के पास गया और कहा कि जुआ में दुर्योधन ने आप को जीत लिया। उस के आदेश के अनुसार दासी का काम करवाने के लिए मैं आपको ले चलता हूँ। प्रश्नपरम्परा में द्रौपदी ने उससे कहा कि सभा में उपस्थित महापुरुषों से जाकर पूछो कि इस समय मुझे क्या करना चाहिए। प्रतिकामी ने सभा में जाकर उस के प्रश्न को उपस्थित किया। दुर्योधन के दुराग्रह को जानकर सभी नीचे मुँह किये बैठे रहे, कोई कुछ भी नहीं बोला। युधिष्ठिर ने एक दूत के द्वारा द्रौपदी को सन्देश भेजा कि किसी अवस्था में हो तुरन्त रोती हुई सभा में आकर ससुर के सामने खडे हो जाओ। उसका अभिप्राय यह है कि द्रौपदी को सभा में आये देख सभी सभासद मन ही मन दुर्योधन की निन्दा करेंगे। तब दुर्योधन नें प्रतिकामी से द्रौपदी को सभा में ले आने को कहा। उस के संकोच को देखकर दुर्योधन ने द्रौपदी को पकडकर ले आने के लिए दुःशासन को आज्ञा दे दी। जब उस ने उसे ले आने का प्रयास किया तब वह विलाप करती हुई धृतराष्ट्र की स्त्रियों की ओर भागी। दुःशासन ने दौडकर द्रौपदी के केश पकडकर घसीटता हुआ सभाभवन ले आया।

द्रौपदी की दुरवस्था को देखकर भीमसेन को बडी व्यथा हुई ओर युधिष्ठिर की ओर देखकर अत्यन्त कुपित हो उठे। अर्जुन ने उसे किसी प्रकार शान्त किया। द्रौपदी की दुरवस्था को देखकर धृतराष्ट्रनन्दन विकर्ण ने धर्मसम्बद्ध विचार उपस्थित करते हुए कहा कि पाण्डुकुमार युधिष्ठिर पहले अपने आपको हार चुके थे उस के बाद उन्होंने द्रौपदी को दाँव पर रखा है। इसलिये द्रौपदी को जीती हुई नहीं मैं मानता। कर्ण ने उसका विरोध किया और उस ने द्रौपदी के वस्त्र को उतारने के लिए दुःशासन को आदेश दिया। जब दुःशासन ने सभा में द्रौपदी को विवस्त्र करना आरम्भ किया तब उस ने रक्षा के लिए गोविन्द का नामस्मरण किया। भगवान श्रीकृष्ण ने अव्यक्तरूप से विविध वस्त्रों से द्रौपदी को आच्छादित कर लिया। उस समय भीमसेन ने क्रोधपूर्वक यह प्रतिज्ञा की कि युद्ध में दुःशासन का वक्षःस्थल विदीर्ण करके उसका रक्तपान करूँगा। वस्त्र खींचते खींचते थककर दुःशासन लज्जित हो चुपचाच बैठ गया। विदुर ने सभा में बैठे सदस्यों से द्रौपदी के प्रश्नों का उत्तर देने को कहा। लेकिन कोई कुछ भी न कहा सका। जब द्रौपदी ने सभा में उपस्थित लोगों से न्याय की याचना की तब दुर्योधन ने उससे

कहा कि तुम्हारा यह प्रश्न तुम्हारे पति भीम, अर्जुन, सहदेव और नकुल पर छोड दिया जाता है। यदि ये लोग 'तुम्हें दाँव लगाने का अधिकार धर्मराज को नहीं देते तो तुम दास्यभाव से मुक्त कर दी जाओगी। उनके वचनों से क्रुद्ध भीमसेन को भीष्म द्रोण और विदुर ने शान्त किये।

कर्ण ने द्रौपदी से कहा कि राजकुमारी! आज से धृतराष्ट्र के समस्त पुत्र तुम्हारे स्वामी हैं, कुन्ती के पुत्र नहीं। इसलिये इनमें से किसी एक को पति के रूप में चुन लो। दुर्योधन ने द्रौपदी के प्रश्नों का उत्तर देने के लिये युधिष्ठिर से पूछा और वस्त्र हटाकर अपनी बायीं जाँघ द्रौपदी को दिखाया। तब भीम ने प्रतिज्ञा की कि वह उस की उस जाँघ को युद्ध में अवश्य तोडेगा। अर्जुन ने कहा कि द्यूत में अपने को हारने के बाद वे किसके स्वामी थे? इस बात पर सब कौरव विचार करें।

उस समय धृतराष्ट्र की अग्निशाला के भीतर एक गीदड आकर जोर जोर से चिल्लाने
लगा। उस शब्द को लक्ष्य करके रासभ (गदहे) तथा भयङ्कर पक्षी भी चारों ओर अशुभसूचक शब्द करने लगे। तब गान्धारी और विदुर दोनों ने इस विषय पर धृतराष्ट्र से निवेदन किया। उनकी बात सुनकर धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को दोषी मानते हुए द्रौपदी से वर माँगने को कहा। तब द्रौपदी ने पहले वर के रूप में युधिष्ठिर को तथा दूसरे वर के रूप में भीम, अर्जुन और नकुल सहदेव को दासभाव से मुक्त करने को माँगा। धृतराष्ट्र के पूछने पर भी तीसरे वर माँगने से इनकार किया।

धृतराष्ट्र ने भाइयों तथा द्रौपदी सहित युधिष्ठिर को इन्द्रप्रस्थ जाने की आज्ञा दी और इस व्यवहार को भूलने का अनुरोध किया। धृतराष्ट्र के आदेश को स्वीकार कर भाइयों तथा द्रौपदी सहित युधिष्ठिर वहाँ से इन्द्रप्रस्थ चले गये।

१०) अनुद्यूतपर्व

इसमें आठ अध्याय तथा ३७५ श्लोक हैं। धृतराष्ट्र की आज्ञा पाकर अपनी सम्पत्ति सहित इन्द्रप्रस्थ की ओर निकले । यह जानकर दुर्योधन, कर्ण और शकुनि पाण्डवों से फिर बदला लेने का निश्चय करके धृतराष्ट्र के पास गये। दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से कहा कि हे महाराज! वनवास की शर्त रखकर हम पाण्डवों के साथ फिर एक बार जुआ खेलना चाहते हैं। जुए में हार जानेवाले मृगचर्म धारण करके बारह वर्ष तक वन में ही निवास करें। तेरहवीं वर्ष में अज्ञात वास करें। अज्ञातवास में पहचाने गये तो फिर दुबारा बारह वर्ष तक वनवास करें। धृतराष्ट्र ने पुत्र के प्रस्ताव को मान लिया। तब दोणाचार्य, सोमदत्त, बाहीक, कृपाचार्य, विदुर, अश्वत्थामा, युयुत्सु, भूरिश्रवा, पितामह भीष्म तथा विकर्ण सब ने धृतराष्ट्र के निर्णय का विरोध किया। लेकिन पुत्रप्रेमी धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को बुलाने का आदेश दिया। धर्मपरायणा गान्धारी भी कुल के विनाश से बचने के लिए दुर्योधन को त्याग करने का सलाह दी। तब धृतराष्ट्र ने उससे कहा कि इस कुल का अन्त भले ही हो जाय, परन्तु मैं दुर्योधन को रोक नहीं सकता। धृतराष्ट्र

की आज्ञा से प्रतिकामी इन्द्रप्रस्थ की ओर जानेवाले युधिष्ठिर के पास गया और बोला कि जुआ खेलने के लिए फिर लौट आने को धृतराष्ट्र ने आपको आदेश दिया है। युधिष्ठिर ने कहा कि जुए के लिए यह बुलावा हमारे कुल के विनाश का कारण है, यह जानते हुए भी मैं उनकी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं कर सकता। ऐसा कहते हुए महाराज युधिष्ठिर भाइयों के साथ जुआ खेलने लौट पडे। तत्पश्चात् उपर्युक्त शर्तों पर जुआ खेला गया और युधिष्ठिर की पराजय हुई। शर्त के अनुसार पाण्डुपुत्रों ने मृगचर्म धारण कर वनवास की दीक्षा ली और वनवास के लिए प्रस्थित हुए। प्रस्थान के समय दुःशासन अपमान की बातों से उपहास करते हुए द्रौपदी को कौरवों में से किसी एक को पति के रूप में चुन लेने को कहा। क्रुद्ध भीम दुःशासन के हृदय को विदार करके रक्तपान करने की अपनी प्रतिज्ञा को दुहराया। उपहास करनेवाले दुर्योधन को देखकर भीम ने कहा कि कौरवपाण्डवयुद्ध में मैं दुर्योधन को मारूँगा। अर्जुन कर्ण का वध करेगा। शकुनि को सहदेव मारेगा। नकुल ने द्रौपदी का अपमान करनेवाले समस्त धार्तराष्ट्रों का संहार करने की प्रतिज्ञा की।

विदुर की प्रार्थना से कुन्ती उस के घर में ही रही भीष्म तथा द्रोण को नमस्कार करके माता कुन्ती से बिदा लेके युधिष्ठिर भाइयों सहित द्रौपदी के साथ वन चला गया। विदुर कुन्ती
को अपने घर ले चले। अपने पुत्रों के दुर्व्यवहार पर धृतराष्ट्र भी उद्विग्न हो गये। उस के पूछने पर विदुर ने पाण्डवों तथा नगरवासियों की मनःस्थिति का वर्णन किया। द्रोणाचार्य ने कहा कि वनवास पूरा करके लौटने के बाद पाण्डव कौरवों पर अवश्य प्रतीकार करेंगे। दोणाचार्य की यह बात सुनकर शोकविह्वल धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को लौटा लाने के लिए विदुर को भेजा। संजय ने धृतराष्ट्र की अकृत्यों की निन्दा की। धृतराष्ट्र ने संजय से कहा कि पाण्डवों के साथ युद्ध करना मुझे पसंद नहीं है। वे कौरवों से अधिक बलवान हैं। इसलिये आप दोनों पक्षों में शान्ति रखने का उपाय करें।

।। सभापर्व कथासार समाप्त ।।